International Journal of Research in Economics and Social Sciences (IJRESS)
Available online at: http://euroasiapub.org
Vol. 7 Issue 10, October- 2017, pp. 599-605
ISSN(o): 2249-7382 | Impact Factor: 6.939 |

"प्रताप नारायण मिश्र के साहित्य में धार्मिक चेतना"

सुशील कुमार
शोध छात्र,
महर्षि दयानन्द विश्वविद्यालय,
रोहतक (हरियाणा)

हमारा हिन्दू धर्म ढोल ग्वार शुद्र पशु नारी ये सब ताड़न के अधिकारी इसी व्याख्या पर टिका था, परन्तु "उन्नीसवीं सदी तक आते–आते यहाँ के चितकों और विचारकों को हिन्दू धर्म बहुत पिछड़ा लगने लगा था, इसका एक कारण भारत में ईसाई धर्म का प्रचार और प्रसार था। ईसाई धर्म कुछ अर्थो में हिन्दू धर्म की अपेक्षा उदार था, इसलिए कुछ अर्थों में हिन्दू धर्म की अपेक्षा उदार था, इसलिए भी लोगों का ध्यान उसकी तरफ जाना स्वाभाविक था। दूसरे ईसाइयों के शासक होने के कारण भी ऐसा हुआ। वैसे भी उस समय तक हिन्दू धर्म में संकीर्णता, बहुदेववाद, अंध–विश्वासों का बाहुल्य तथा 'तीर्थों में व्यभिचार के अडडे बने थे, महंतों के घर पापाचार के आश्रय थे और मूर्तियों के पुजवाने वाले पंडे विकास में डूबे हुए थे।"[1]

भारतीय मानव का जीवन जन्म से लेकर मृत्यु तक रूढ़ियों और अंधविश्वासों में जकड़ा हुआ था, एक दिन की सुबह से दूसरे दिन की सुबह के 24 घण्टे के कार्यक्रम भी धर्म ग्रन्थों द्वारा निर्धारित किए गए थे, क्या खाना है कब खाना है, किस तरफ पैर करके सोना है, प्रवास कब करें, जमहाई लेना, छींकना आदि स्वाभाविक क्रियाओं में भी धर्म निहित आचारों का पालन करना पड़ता था। घर में अगर कोई बिमार पड़ जाए, किसी जानवर की अकस्मात मृत्यु हो जाए तो यह मानना कि – देवताओं व पितरों का प्रकोप हुआ होगा, हिन्दू या भारतीय मानव दिन के चौबीस घण्टे तथा वर्ष के बारहों महीने भूतों, राक्षसों, बेतालों के कड़े पहरे में रहा करते थे। मिश्र जी के धार्मिक विचारों पर विस्तार से अवलोकन करने से पूर्व, उनकी कर्मस्थली कानपुर की धार्मिक स्थिति क्या थी, यह देखना आवश्यक है क्योंकि उसका उनके मस्तिष्क पर पूरा प्रभाव पड़ा था।

उस समय कानपुर शहर में हिन्दू धर्म में व्याप्त तत्कालीन सारी बुराईयां उपस्थित थी। उसमें विभिन्न धार्मिक मतवाद चल रहे थे। हिन्दू धर्म में इतनी संकीर्णता थी कि लोग ईसाई बनने को तैयार रहते थे और जो ईसाई हो जाते थे, उनको दुबारा हिन्दू धर्म में वापिस लेने का कोई प्रावधान नहीं था।[2] मिश्र जी अपने समय के विभिन्न धार्मिक मतवादों को अच्छा नहीं समझते थे, उन्हें ब्रहम समाज की ईसाईयों के प्रति निष्ठा, मूर्तिपूजा का विरोध, थियोसोफिकल सोसाइटी का भूतप्रेत पर विश्वास, जैन, बौद्ध, मुसलमान, ईसाईयों का आपसी विद्वेष पसन्द न था–

"जैन, बौद्ध और मुसलमान ईसाई फैलाऊँ,
कनैजियें हों आठ जहां नौ चूल्हे बनवाऊँ।
नेचर और थियोसोकी भी हूँ में सरदारी,
सब नास्तिकों में सबका करने अगुआकारी।
ब्रहमा को अज्ञानी बनना, मूरत पूजा छुड़वाऊँ,
करके भ्रष्ट सभी के मन को, मैं मंदिर तुड़वाऊँ।[3]

मिश्र जी के पास किसी सिद्धांत, विचार, वस्तु आदि को स्वीकारने का एक ही पैमाना था, क्या इससे दशोन्नति में सहायता मिलेगी? यदि उससे देशोन्नति में बाधा पहुँच रही है तो ऐसी स्थिति में वे बातें अन्य क्षेत्रों में कितनी ही महत्वपूर्ण क्यों न हो, मिश्र जी किसी भी शर्त पर उन्हें स्वीकार करने को तैयार न होंगे, ऐसी थी उनकी देशभक्ति।

International Journal of Research in Economics and Social Sciences (IJRESS)
Available online at: http://euroasiapub.org
Vol. 7 Issue 10, October- 2017, pp. 599-605
ISSN(o): 2249-7382 | Impact Factor: 6.939 |

धार्मिक अंध–विश्वास

धार्मिक अंध–विश्वास, ढ़ोग और रूढियों के ये विरोधी थे। "यदि घर में कुत्ता, कौआ कोई हड्डी डाल दे अथवा खाते समय कोई मांस का नाम ले ले तो आप मुंह बिचकाते हैं, पर विलायती दियासलाई और विलायती शक्कर जिसमें हड्डी तथा रक्त दोनों पड़े हुए है वो भी न जाने किन–किन जानवरों के, वह आरती के समय बत्ती जलाने को सिंहासन के पास रख लेते हैं और भोग लगाकर गटक जाने तक में नहीं हिचकाते।"[4]

भक्तों का वर्गीकरण

भक्तों के उनके वर्गीकरण को देखने से भी पता चल जाता है कि वे पांखडियों, ढोंगियों की किस प्रकार कलई खोलते है। उनके अनुसार भक्तों की "कोई बगुला भक्त है अर्थात् दिखाने मात्र के भक्त, पर मन जैसे का तैसा कोई पेटु हल भक्त है अर्थात् यजमान से दक्षिणा मिलनी चाहिए और काम न किया पूजा ही सही। कोई भगत वो है जो रास्ते में और मंदिर में आंखे सेंकने ही को पूजा की आड़ पकड़ते हैं।"[5]

स्वर्ग–नरक भक्ति

मिश्र जी के स्वर्ग नरक के बारे में अलग विचार थे, वे कहते थे, उसने तो कभी स्वर्ग व नरक देखा नहीं है। "हमने भी सारा भूगोल, खगोल पढ़ डाला, पर नरक और बैकुंठ का पता नहीं चल पाया।"[6]

मिश्र जी कहते है हमने सारा भूगोल पढ़ डाला, परन्तु स्वर्ग व नरक का कोई वैज्ञानिक आधार नहीं मिला। मरने के बाद आदमी कहाँ जाता है स्वर्ग या नरक में, इस पर भी वे व्यंग्य कहते हैं।

"इस विषय में किसी की चिट्ठी नहीं आई, समाचार नहीं मिला। हम क्या जाने क्या होता है? ईश्वर से पूछो या किसी मरे हुए के नाम तार भेजो।"[7]

आस्तिक–नास्तिक

मिश्र जी आस्तिक नास्तिक के झगड़े में नहीं पड़ना चाहते थे,

"हम यह सिद्ध करना नहीं चाहते कि ईश्वर है या नहीं, किंतु अपने पाठकों को यह सलाह अवश्य देगें कि इन झगड़ों में न पड़कर उसका मान लेना ही श्रेष्ठ समझें क्योकि बुद्धिमानों का सिद्धांत है कि ईश्वर को बाद में न ढूढ़ों, बरचं विश्वास में ढूँढो।"[8]

इस प्रकार मिश्र जी का भी मानना था कि ईश्वर बहस का विषय नहीं, भावना की वस्तु है।

सर्वधर्म समन्वय

मिश्र जी सभी धर्मो का सम्मान करते थे। उनमें किसी प्रकार की धार्मिक संकीर्णता नही थी।

"हिन्दू धर्म, जैन धम्र, क्रिस्तानी धर्म, मुसलमानी धर्म, सबके द्वारा हमारा प्रभु हमें मिल सकता है।"[9]

ईसाई धर्म के प्रबल विरोधी होते हुए भी उन्हें ईसाई धर्म विशेष से विरोध नहीं है

"अहं इहां पर तीन मत, हिन्दू, यवन, क्रिस्तान, भारत की शुभदेह में, तीन हुँ अस्थि समान।"[10]

साम्प्रदायिक सद्भाव

मिश्र जी साम्प्रदायिकता के कट्टर दुश्मन थे जो लोग साम्प्रदायिकता फैलाते है, वे उनको दण्ड देनक की बात करते हैं।

"ऐसे लोगों को जो सभाओं में बैठ के तथा मेलों और बजारों में खड़े हो के किसी के मत पर आपेक्ष करते हैं। सरकार की और से दंडनीय हो जाएं तो अति उत्तम हो।"[11]

मूर्ति पूजा

मिश्र जी 'मूर्ति' को केवल परमदेव की सेवा करने तथा मन लगाने के लिए एक संकेत मानते थे। उनके अनुसार मूर्ति पत्थर की होती है, परन्तु स्तुति तो ईश्वर की होती है। 15 मई, 1889 के

International Journal of Research in Economics and Social Sciences (IJRESS)
Available online at: http://euroasiapub.org
Vol. 7 Issue 10, October- 2017, pp. 599-605
ISSN(o): 2249-7382 | Impact Factor: 6.939 |

ब्राह्मण पत्रिका में प्रतिमा द्वेषी और प्रतिमा प्रेमी में प्रश्नोत्तर छपा है :–

प्रतिमा द्वेषी प्रश्न करता है:

"महमूद गजनवी और औरंगजेब ने सैकड़ों मंदिर तथा मूर्तियां तोड़ डाली, जो उनमें शक्ति होती तो ऐसा क्यों होता?"

"प्रतिमा को हम प्रतिमा समझते है नहीं तो हम प्रतिमा के आगे स्तुति करते समय ईश्वर का नाम क्यों लेते। हम जिसे मानते व पूजते है तो प्रतिमा नही केवल चिन्ह मात्र है। सो बाह्य चिन्ह तो सब नाशवान है, उन्हें क्या औरंगजेब न तोड़ता तो भी समय पाकर अपने आप बिगड़ जाते। उससे हम पर क्या आपेक्षा हो सकता है।"[12] अगर सभी लोग प्रतिमाओं को इस नजर से देखने लगे तो न केवल राम जन्म भूमि बनाम बाबरी मस्जिद विवाद समाप्त हो जाए, वरन् भारतीय समाज से बहुत कुछ क्या पूरी ही साम्प्रदायिकता समाप्त हो जाए।

बलि देने के विरूद्ध

मिश्र जी ईश्वर को प्रसन्न करने के लिए पशु बलि और कहीं–कहीं नर बलि की कुप्रथा रही है, उसे गलत मानते थे, मिश्र जी कहते हैं :

'बेचारे अनबोल बकरे की हत्या करने से भगवती प्रसन्न होती है, यों होत तो उनका नाम जगदम्बा न होता वरंच जगत–भक्षिणी होता।"[13] माँ का रूप हमेशा रक्षक का रहा है भक्षक का नहीं।

गोरक्षा –

मिश्र जी जहाँ पशु बलि के विरोधी थे वहीं गोरक्षा के समर्थक थे, गोरक्षा के लिए वे समय–समय पर आवाज उठाते थे। वे गाय के बारे में बताते है कि गाय घास के बदले दूध देती है उसका मुत्र कई दवाओं मे काम आता है। यहाँ तक कि मरने के बाद भी हड्डी और चमड़ा देशवासियों का उपकार करते हैं। "जिनके लरिका खेती करिकै पाअैं मनझन के परिवार।

ऐसी गाइन की इच्छा माँ जो कुछ क्षमा दया अधिकाय।।
घास के बदले दूध पियाबै, मारिके देय हाड़ और चाम।।
धनि वह तन मन धन जो आवै ऐसी जगदम्बा के काम।।
कहाँ लौं वरनो में गइयन का जिनके कोटि–कोटि उपकार।।"[14]

इसके साथ ही मिश्र जी गौरक्षा के नाम पर हिन्दु मुसलमान में भेद को भी सही नहीं मानते थे वे मुसलमानों को कहते हैं कि अगर गाय बचेगी तो मुसलमानों को कड़वा दूध न देंगी। मिश्र जी केवल गाय की रक्षा की ही बात नहीं करते थे अपितु वे पशु हत्या को भी गलत मानते थे। मिश्र जी ने गो गुहार नामक कविता में लिखा है :

"हम अबुद्धि अनबोल पशु, सकल कहा समुझाय।
हमरे अरु संसार के, के हरि होहु सहाय।।
जब सब हमारी गति, करिबे है संहार।
का अचरच तब मांस प्रिय, रवैहे मानव मार।।[15]

पशु कहता है कि हमें तो बुद्धिहीन माना जाता है, फिर भी हम मनुष्यों को चेताये देते हैं कि यदि पशुओं का संहार ऐसे ही चलता रहा तो एक दिन सभी पशुओं के समाप्त होने पर मनुष्य आदमी को ही मारकर खाया करेगा।

निष्कर्ष

इस प्रकार प्रतापनारायण मिश्र जी के साहित्य में धार्मिक चेतना का पूरा प्रभाव था। उन्होंने उस समय के हिन्दू धर्म में अविश्वास का कारण बहुदेववाद, अंधविश्वास आदि का माना और वे धार्मिक विद्वेष को सहीं नही मानते थे। देश की उन्नति को वे सभी धर्मों से ऊपर मानते थे। मिश्र जी कहते है अगर हमें माँस दिख जाए तो मुँह बनाते है वही चीनी व दियासलाई का प्रयोग खुलकर कहते है जिससे हड्डियों का प्रयोग होता है। भक्तों का वर्गीकरण भी मिश्र जी ने बखूबी किया है। मिश्र जी

ने स्वर्ग व नरक के बारे में भी कहा है कि स्वर्ग नरक का कोई वैज्ञानिक आधार नहीं है। मिश्र जी ने सर्वधर्म सद्भाव व साम्प्रदायिक सद्भाव पर बल दिया, मूर्ति पूजा को वे सही मानते थे परन्तु पत्थर की मूर्ति के पीछे भगवान की स्तुति की बात करते थे। उन्होंने पशु बलि का विरोध किया व गाय के बारे में कहा कि अगर मुसलमान गाय को ना मारे तो क्या वह उनके कड़वा दूध देगी। गाय घास खाती है और दूध देती है। उसके गोबर से खाद बनता है और मरने के बाद भी चमड़ा देती है। इस प्रकार हम कह सकते है कि प्रतापनारायण मिश्र जी की धार्मिक चेतना मे जीवन से जुड़े हर पहलू का चित्र प्रस्तुत है।

संदर्भ

1. संदर्भ के चार अध्याय, दिनकर, पृ0 238
2. प्रतापनारायण मिश्र की हिन्दी गद्य की देन, परिशिष्ट कृ0 पृ. 471
3. भारत दुर्दशा, रूपक 211, प्रतापनारायण मिश्र
4. प्रताप नारायण ग्रन्थावली, पृ. 374
5. प्रताप नारायण ग्रन्थावली, पृ. 617
6. प्रताप नारायण ग्रन्थावली, पृ. 585
7. प्रताप नारायण ग्रन्थावली, पृ. 96
8. प्रताप नारायण ग्रन्थावली, पृ. 693
9. प्रताप नारायण ग्रन्थावली, पृ.619
10. प्रताप लहरी, पृ0 25
11. प्रताप नारायण ग्रन्थावली, पृ. 236
12. ब्राह्मण, 5/10
13. प्रताप नारायण ग्रन्थावली, पृ. 173
14. प्रताप लहरी, पृ. 211
15. प्रताप लहरी, पृ. 25